

इकाई – 5

चिकित्सात्मक उपागम एवं परामर्श

इस अध्याय को पढ़ने के बाद आप –

- मनोचिकित्सा का अर्थ एवं प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- मनोचिकित्सा के विभिन्न प्रकारों को समझ सकेंगे।
- मनोगत्यात्मक, व्यवहारावादी, संज्ञानात्मक एवं मानवतावादी मनोचिकित्सा के विभिन्न संप्रत्ययों को समझ सकेंगे।
- वैकल्पिक चिकित्सा के तहत योग एवं ध्यान का महत्त्व समझ सकेंगे।

परिचय

पिछले अध्याय में आप प्रमुख मनोवैज्ञानिक विकारों के बारे में पढ़ चुके हैं। मनोवैज्ञानिक विकारों का सफलतापूर्ण उपचार एक अति महत्वपूर्ण तथा जटिल कार्य है, जो मनश्चिकित्सकों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार की उपचार पद्धति का प्रमुख रूप मनोवैज्ञानिक होता है। प्रत्येक प्रकार में उपचार का उद्देश्य सेवार्थी की सहायता करना है जिससे उसके कष्ट को दूर किया जा सके और उसके जीवन को अधिक सरल एवं रचनात्मक बनाया जा सके। मनश्चिकित्सा कई प्रकार की होती है। कुछ चिकित्सा आत्म-अवगाहन प्राप्त करने पर ध्यान देती है; अन्य दूसरी चिकित्सा अपेक्षाकृत अधिक क्रिया-अभिविन्यस्त होती हैं। कुछ की प्रकृति निदेशात्मक होती है, जैसे – मनोगतिक, जबकि कुछ की अनिदेशात्मक, जैसे – व्यक्ति केंद्रित चिकित्सा।

परामर्श, मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें उन प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जिसके सहारे मनोवैज्ञानिक किसी दूसरे ऐसे व्यक्ति को, जो समायोजन की साधारण समस्याओं से जूझते रहते हैं, उन्हें अपनी इन समस्याओं से निपटने के लिए विशेष सलाह देते हैं। इस अध्याय में हम मनोचिकित्सा के कुछ प्रमुख रूपों व परामर्श की संक्षेप में चर्चा करेंगे।

मनश्चिकित्सा की प्रकृति एवं प्रक्रिया

सरल शब्दों में चिकित्सा का अर्थ है – रोगों का उपचार करना तथा मनश्चिकित्सा का अर्थ है – मानसिक रोगों का उपचार करना। रैथस तथा नेविड (Rathus and Nevid) के अनुसार, “मनोचिकित्सा उपचार की वह विधि है, जिसमें एक चिकित्सक तथा एक रोगी के बीच क्रमबद्ध पारस्परिक क्रिया संचालित होती है, जिसके द्वारा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों की सहायता से रोगी के विचारों, भावों या व्यवहारों को प्रभावित करके उसे अपने असामान्य व्यवहार पर विजय पाने अथवा अपने जीवन निर्वाह की समस्याओं से समायोजित होने में सहायता की जाती है।” सरासन तथा सरासन (Sarason and Sarason) ने कहा है कि, “मनोचिकित्सा का तात्पर्य उन मनोवैज्ञानिक, शाब्दिक तथा अभिव्यंजक प्रविधियों से है, जिनका उपयोग कुसमायोजी व्यवहार में किया जाता है।”

सभी मनश्चिकित्सात्मक उपागमों में निम्न अभिलक्षण पाए जाते हैं :- (1.) चिकित्सा के विभिन्न सिद्धान्तों में अंतर्निहित नियमों का अनुप्रयोग होता है। (2.) केवल उन्हीं व्यक्तियों को मनोचिकित्सा करने का अधिकार है जो व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किए हों, हर कोई नहीं कर सकता है। (3.) चिकित्सात्मक प्रक्रिया में दो व्यक्ति शामिल होते हैं, उनमें एक चिकित्सक और दूसरा सेवार्थी होता है। सेवार्थी अपनी संवेगात्मक समस्याओं के समाधान के लिए चिकित्सक की शरण में आता है। (4.) इन दोनों व्यक्तियों चिकित्सक एवं सेवार्थी, के बीच एक चिकित्सात्मक संबंध का निर्माण होता है। यह एक गोपनीय, अन्तर्व्यक्तिक एवं गत्यात्मक संबंध होता है।

सुन्डबर्ग एवं टाइलर (Sundberg & Tyler) ने मनश्चिकित्सा के विभिन्न पहलुओं एवं इस क्षेत्र में किये गए शोधों की समीक्षा की और बतलाया कि मनश्चिकित्सा के प्रमुख उद्देश्यों या लक्ष्यों में निम्नांकित सर्वाधिक उत्कृष्ट हैं –

- (1.) उपयुक्त कामों को करने की प्रेरणा को मजबूत करना।
- (2.) भावों की अभिव्यक्ति द्वारा सांवेगिक दबावों को कम करने में मदद करना।
- (3.) वर्द्धन के लिए सामर्थ्यता की अभिव्यक्ति करना।
- (4.) अपनी आदतों को बदलने में मदद करना।
- (5.) संज्ञानात्मक रचनाओं को परिवर्तित करना।
- (6.) आत्म-ज्ञान प्राप्त करना।
- (7.) अन्तर्वैयक्तिक संबंधों एवं संचारों को प्रोत्साहित करना।
- (8.) ज्ञान प्राप्त करने एवं निर्णय करने में प्रोत्साहन करना।
- (9.) शारीरिक अवस्थाओं में परिवर्तन करना।
- (10.) चेतन की वर्तमान अवस्था को परिवर्तित करना।
- (11.) सेवार्थी के सामाजिक वातावरण को परिवर्तित करना।

चिकित्सात्मक संबंध

मनोचिकित्सा के दौरा सेवार्थी एवं चिकित्सकीय के बीच एक विशेष संबंध विकसित हो जाता है जिसे चिकित्सात्मक संबंध कहा जाता है। चिकित्सीय संबंध ऐसा संबंध होता है जिसमें चिकित्सक तथा सेवार्थी दोनों ही यह जानते हैं कि वे क्यों एकत्रित हुए हैं तथा उनकी अन्तः क्रियाओं का नियम तथा लक्ष्य क्या है। निटजील, बर्नस्टीन एवं मिलिच (Nietzel, Bernstein & Milich) ने चिकित्सात्मक संबंध के संदर्भ में कहा है कि “मनश्चिकित्सकीय संबंध एक पोषक परंतु उद्देश्यपूर्ण संबंध होता है जिसमें मनोवैज्ञानिक स्वरूप की कई विधियों का उपयोग क्लायंट में बाधित परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है।” मनश्चिकित्सा की शुरुआत चिकित्सकीय अनुबंध (Therapeutic Contract) से होती है, जिसमें उपचार का लक्ष्य, चिकित्सा की प्रविधि जिसका उपयोग किया जाना है, संभावित जोखिम तथा चिकित्सा एवं सेवार्थी के वैयक्तिक उत्तदायित्वों का उल्लेख होता है। यह एक विश्वास तथा भरोसे पर आधारित संबंध है। उच्चस्तरीय विश्वास सेवार्थी को चिकित्सक के सामने बोझ हल्का करने तथा उसके सामने अपनी मनोवैज्ञानिक और व्यक्तिगत समस्याओं को विश्वस्त रूप से बतलाने में समर्थ बनाता है। चिकित्सक की यह कोशिश रहती है कि वह सेवार्थी के साथ एक ऐसा सौहार्दपूर्ण संबंध बना सके कि वह अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए काफी उत्सुक रहे। कोरचीन (Korchin) ने यह स्पष्टतः कहा है कि “चिकित्सकीय संबंध में आसक्ति लाने तथा अनासक्ति या अलगाव का संतुलन होना चाहिए”। उत्तम चिकित्सकीय संबंध में अन्य बातों के अलावा निम्नांकित अपेक्षित गुण होता है।

- (i) सेवार्थी एवं चिकित्सकीय के बीच चिकित्सीय संबंध में नैतिक वचनबद्धता होती है जिसमें गोपनीयता प्रमुख है। चिकित्सक सेवार्थी के गोपनीयता की रक्षा करता है तथा चिकित्सा के दौरान बतलाई गई बातों को किसी अन्य व्यक्ति को नहीं बतलाता है।
- (ii) चिकित्सकीय संबंध इस ढंग का होना चाहिए कि चिकित्सक सेवार्थी के कल्याण को सर्वाधिक प्राथमिकता दे।
- (iii) उस चिकित्सकीय संबंध को उत्तम माना जाता है जिसमें भूमिका-निवेश होता है। भूमिका निवेश से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सक तथा सेवार्थी दोनों ही चिकित्सा को सफल बनाने में व्यक्तिगत प्रयास करते हैं।
- (iv) चिकित्सक अपने शब्दों और व्यवहारों से यह संप्रेषित करता है कि वह सेवार्थी का मूल्यांकन नहीं कर रहा है तथा बिना किसी शर्त के सकारात्मक आदर की भावना रखता है।
- (v) चिकित्सक की सेवार्थी के प्रति तदनुभूति होती है। तदनुभूति का अर्थ है कि दूसरे व्यक्ति के परिप्रेक्ष्य से या उसके स्थान पर स्वयं को रखकर बातों को समझना। तदनुभूति चिकित्सात्मक संबंध को समृद्ध

बनाती है तथा इस एक स्वास्थ्यकर संबंध में परिवर्तित करती है। यह न तो एक क्षणिक परिचय होता है और न ही एक स्थायी एवं टिकाऊ संबंध। यह एक सीमित अवधि का व्यावसायिक संबंध होता है और इसे ऐसा ही रहना चाहिए। यह संबंध तब तक चलता है जब तक सेवार्थी अपनी समस्याओं का सामना करने में समर्थ न हो जाए तथा अपने जीवन का नियंत्रण अपने हाथ में न ले ले।

क्रियाकलाप 5.1

अपने शहर में स्थित मानसिक रोगों का उपचार करने वाली संस्थाओं के बारे में विस्तृत जानकारी एकत्र कीजिए।

मनश्चिकित्सा के प्रकार

यद्यपि सभी मनश्चिकित्साओं का उद्देश्य व्यक्ति की मानसिक व्याधियों, द्वन्द्वों तथा विकृतियों का उपचार करना होता है तथापि वे संप्रत्ययों, विधियों और तकनीक में एक दूसरे से भिन्न हैं। मनश्चिकित्सा को तीन व्यापक समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे कि मनोगतिक, व्यवहार तथा अस्तित्वपरक मनश्चिकित्साएँ। इनका वर्गीकरण निम्न प्राचलों पर आधारित है:-

1. क्या कारण है, जिसने समस्या को उत्पन्न किया ?

मनोगतिक चिकित्सा के अनुसार अचेतन की दमित इच्छाएँ, संघर्ष तथा उलझनों से मनोवैज्ञानिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। व्यवहार चिकित्सा के अनुसार व्यवहार एवं संज्ञान के दोषपूर्ण सीखने के कारण समस्या उत्पन्न होती है। अस्तित्वपरक चिकित्सा का मानना है कि अपने जीवन और अस्तित्व के अर्थ से संबंधित प्रश्न मनोवैज्ञानिक समस्याओं का कारण होते हैं।

2. कारण का उदय कैसे हुआ ?

मनोगतिक चिकित्सा में मनोवैज्ञानिक समस्याएं आरंभिक मनोलैंगिक विकास के दौरान दमित स्मृतियों, चिन्तनों, डर, आशंकाओं एवं मानसिक संघर्षों के कारण पैदा होती हैं। व्यवहार चिकित्सा की अभिधारणा है कि दोषपूर्ण अनुबंधन, दोषपूर्ण सीखना तथा दोषपूर्ण चिंतन एवं विश्वास असामान्य व्यवहार को उत्पन्न करते हैं। मानवतावादी – अस्तित्वपरक चिकित्सा की धारणा है कि व्यक्ति में जो अकेलापन, विसंबंधन तथा जीवन का अर्थ समझने और यथार्थ संतुष्टि प्राप्त करने में अयोग्यता की भावना है मनोवैज्ञानिक समस्याओं का कारण है।

3. उपचार की मुख्य विधि क्या है ?

मनोगतिक चिकित्सा मुक्त साहचर्य विधि और स्वप्न को बताने की विधि का उपयोग सेवार्थी की भावनाओं और विचारों को प्राप्त करने के लिए करती है। इस प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति के अचेतन में छिपी विषय-सामग्री को चेतन स्तर पर लाकर उसके विवेचन के आधार पर उसके व्यक्तित्व के पुनर्गठन का प्रयास किया जाता है, जिससे वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं तथा समाज द्वारा मान्य विधियों से कर सके। व्यवहार चिकित्सा सेवार्थी को अनुपयुक्त असमायोजित प्रतिक्रियाओं को छोड़कर सही तथा समायोजित प्रतिक्रियाओं को अपनाना सिखाती है। इस समस्त प्रक्रिया के पीछे सम्बन्ध प्रत्यावर्तन की विधि अपनायी जाती है। अस्तित्वपरक चिकित्सा एक सकारात्मक, स्वीकारात्मक एवं अनिर्णयात्मक वातावरणप्रदान करती है। इसमें सेवार्थी अपनी समस्याओं पर खुल कर बात कर सकता है। तथा चिकित्सक एक सुगमकर्ता की तरह कार्य करता है।

4. सेवार्थी और चिकित्सक के बीच चिकित्सात्मक संबंध की प्रकृति क्या होती है?

मनोगतिक और व्यवहार चिकित्सा, दोनों का मानना है कि चिकित्सक सेवार्थी की समस्याओं तक

पहुंचने में समर्थ होते हैं, अतः वे ही सेवार्थी के उचित व्यवहार को निर्धारित करते हैं और उस की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हैं। इसके विपरीत मानवतावादी – अस्तित्वपरक चिकित्सा में सेवार्थी के व्यक्तिगत अनुभवों तथा स्वतंत्र विचारों पर बल दिया जाता है तथा उसे नियंत्रित स्वतन्त्रता देकर रोग निदान तथा नयी जीवन शैली की तलाश का मौका दिया जाता है।

5. सेवार्थी को मुख्य लाभ क्या है ?

मनोगतिक चिकित्सा रोगी या सेवार्थी में इस हद तक सूझ विकसित कर देता है कि वह अपनी समस्या या लक्षणों को स्वयं समझ सके तथा अपने विश्वासों, मूल्यों एवं दृष्टिकोणों में आवश्यक परिवर्तन कर अपने कष्ट कम कर सके। व्यवहार चिकित्सा दोषपूर्ण व्यवहार और विचारों को बदलकर उसकी जगह पर अनुकूली व्यवहार व विचारों से कष्टों में आने वाली कमी को मुख्य लाभ मानती है। मानवतावादी अस्तित्वपरक चिकित्सा व्यक्तिगत संवृद्धि को मुख्य लाभ मानती है। व्यक्तिगत संवृद्धि अपने बारे में और अपनी आकांक्षाओं, संवेगों तथा अभिप्रेरकों के बारे में बढ़ती समझ प्राप्त करने की प्रक्रिया है।

6. उपचार की अवधि क्या है ?

मनोगतिक चिकित्सा की अवधि कई वर्षों तक की हो सकती है, लेकिन अब इस चिकित्सा के कई आधुनिक रूपांतर 10-15 सत्रों में पूरे हो जाते हैं। व्यवहार चिकित्सा तथा अस्तित्वपरक चिकित्सा संक्षिप्त होती हैं तथा कुछ महीनों में ही पूरी हो जाती हैं।

यद्यपि मनोचिकित्सा की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं, जिनमें प्रक्रिया की दृष्टि से पर्याप्त विविधता है तथापि सामान्यतः मनोचिकित्सा बॉक्स 5.1 में दिए गए चरणों से होती हुई सुधार की दिशा में आगे बढ़ती है।

बॉक्स 5.1

मनश्चिकित्सा के सामान्य चरण

1. सेवार्थी तथा मनोचिकित्सक के मध्य विश्वासपूर्ण सम्बन्धों की उत्पत्ति :- किसी भी मनोपचार-पद्धति के सफल प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि सेवार्थी तथा चिकित्सक के मध्य सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हों जिससे वह बिना किसी हिचकिचाहट के अपनी समस्याओं को चिकित्सक के सम्मुख रख सके यह तभी सम्भव है जब सेवार्थी को यह विश्वास हो जाए कि उसकी बातों को गुप्त रखा जायेगा तथा चिकित्सक उसके प्रति पूरी तदनुभूति व बिना शर्त के सकारात्मक आदर की भावना रखता है।

2. संवेगात्मक अभिव्यक्ति :- सेवार्थी अपनी समस्याओं को चिकित्सक के सामने लाता है और उनसे सम्बन्धित आक्रामकता, भय, अपराध-भावना तथा अन्य संवेगों को व्यक्त करता है। संवेगात्मक भावनाओं का यह “मोचन” शाब्दिक अभिव्यक्ति – प्रभावी मनोचिकित्सा के लिए आवश्यक समझी जाती है। यह अन्तर्दृष्टि के विकास और समस्याओं के समाधान के लिए धनात्मक क्रियाओं का मार्ग प्रशस्त करती है।

3. अन्तर्दृष्टि :- जैसे-जैसे सेवार्थी की अवदमित विषय सामग्री बाहर आती-जाती है, वैसे-वैसे उसकी कठिनाइयों तथा व्यवहार के वास्तविक स्वरूप के प्रति जानकारी बढ़ती जाती है। इसके आधार पर सेवार्थी की समायोजन प्रक्रिया में सुधार होने लगता है।

4. संवेगात्मक पुनर्शिक्षा :- जब सेवार्थी को अपनी कठिनाइयों तथा उनको सुलझाने हेतु प्रयुक्त त्रुटिपूर्ण क्रियाओं की जानकारी हो जाती है, तब वह इस स्थिति में होता है कि वह सही दिशा में गमन कर अपनी कठिनाइयों को सुलझा सके। इससे वह पूर्व-अनुपयुक्त क्रियाओं के स्थान पर नवीन वांछित एवं उत्पादक क्रियाएं सीखता है। यह धनात्मक क्रियाएं धीरे-धीरे उसमें सामर्थ्य तथा आत्म-विश्वास का उदय करती हैं; जो व्यक्तित्व समायोजन के लिए अनिवार्य हैं।

5. समापन - जब सेवार्थी अपने द्वन्दों पर काबू पा लेता है और अपनी समस्याओं के समाधान की ओर काफी कुछ अग्रसर हो जाता है तो चिकित्सा के समापन का समय आ जाता है।

आगामी खंडों में पूर्व में उल्लेखित मनोचिकित्सा के तीन प्रमुख प्रकारों का वर्णन किया गया है।

मनोगतिक चिकित्सा

मनोगतिक चिकित्सा का प्रतिपादन सिगमंड फ्रायड द्वारा किया गया था। मनश्चिकित्सा का यह सबसे प्राचीन रूप माना जाता है। फ्रायड द्वारा प्रतिपादित मनोगतिक चिकित्सा का विस्तृत वर्णन नीचे दिया गया है।

अंतः मनोद्वंद्व के स्वरूप को बाहर निकालने की विधियाँ:-

मनोगतिक उपागम अंतः मनोद्वंद्व को मनोवैज्ञानिक विकारों का मुख्य कारण समझता है, अतः उपचार में पहला चरण इसी को बाहर निकालना है। इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण विधियों को बतलाया गया है।

मुक्त साहचर्य – फ्रायड का मत था कि व्यक्ति सभी विशेष पीड़ादायक या चिन्ता बढ़ाने वाले अनुभव, इच्छाओं और अन्तर्द्वन्द्वों को अचेतन में अवदमित कर देता है जिसके कारण वह अपने व्यवहार एवं विचारों के वास्तविक आधार से अनभिज्ञ रहता है। मनोविश्लेषण उपचार विधि में इन अवदमित सामग्री अथवा संवेगों को प्रकट कराने की विधि को ही मुक्त साहचर्य विधि के नाम से जाना जाता है। मुक्त साहचर्य विधि का यह सामान्य नियम है कि एक व्यक्ति चिकित्सक को वह सब कहे जो उसके मन में आ रहा है चाहे सेवार्थी के समझ में वह कितना भी व्यक्तिगत, दुखदायी अथवा निरर्थक ही क्यों न हो। इस विधि के द्वारा सेवार्थी अनायास ही अपने अवदमित संवेगों एवं अन्तर्द्वन्द्वों को व्यक्त कर देता है जिससे कि वह कुछ समय में स्वयं को हल्का अनुभव करने लगता है। कहते हैं कि अपने मन की बात दूसरे के साथ बाँट लेने से काफी राहत मिलती है।

मुक्त साहचर्य की प्रक्रिया – सामान्यतः मुक्त साहचर्य उपचार के दौरान सेवार्थी को एक एकान्त कमरे में कुर्सी पर आराम से बैठाया जाता है अथवा आरामदेह बिस्तर पर लिटा दिया जाता है। चिकित्सक सेवार्थी के पीछे या सिर की ओर बैठता है जिससे कि वह सेवार्थी को सीधे दिखाई न दे और सेवार्थी को अपने विचारों को स्वतन्त्र रूप से व्यक्त करने में कोई व्यवधान अनुभव न हो। इसके पश्चात् चिकित्सक सेवार्थी को इस उपचार के सम्बन्ध में सामान्य निर्देश देता है कि किस प्रकार उसे अपने विचारों को स्वतन्त्र एवं निःसंकोच बताना है। चिकित्सक सेवार्थी को अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

विश्लेषण – उपरोक्त प्रक्रिया के दौरान चिकित्सक की भूमिका लगभग निष्क्रिय होती है। चिकित्सक का मुख्य कार्य विश्लेषण से प्रारम्भ होता है। चिकित्सक मुक्त साहचर्य के दौरान प्राप्त विचार सामग्री का गहन विश्लेषण करके सेवार्थी के मुख्य अन्तर्द्वन्द्वों, प्रेरणाओं एवं संवेगों को पहचान कर सेवार्थी में अन्तर्दृष्टि बढ़ाने में सहायता करता है जिससे कि सेवार्थी अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं कर सकने में समर्थ हो सके तथा अपने व्यक्तित्व का बेहतर विकास कर अपने वातावरण के साथ ठीक प्रकार से समायोजन कर सके।

स्वप्न विश्लेषण – मुक्त साहचर्य उपचार पद्धति पर कार्य करते हुए फ्रायड को स्वप्न के महत्व का आभास हुआ क्योंकि सेवार्थी मुक्त साहचर्य के दौरान अक्सर अपने स्वप्नों का जिक्र करते थे। उन्होंने इस तथ्य की खोज की कि स्वप्नों का एक निश्चित अर्थ होता है यद्यपि वे छिपे हुए होते हैं। उन्होंने यह पाया कि जब सेवार्थी को अपने स्वप्न के टुकड़ों को स्वतन्त्र रूप से जोड़ने के लिए प्रोत्साहित किया गया तब सेवार्थी ने अवदमित सामग्री का वर्णन अधिक किया जो कि जाग्रत अवस्था में साहचर्य के दौरान दिये गये सामग्री से अधिक लाभप्रद थे। फ्रायड ने अपने इन अनुभवों का वर्णन 1900 में प्रकाशित अपनी एक पुस्तक (The Interpretation of Dreams) में विस्तार से किया है। फ्रायड का मत था कि स्वप्न सामग्री वह

सामग्री है जो कि समय-समय पर प्रतिरक्षाक्रियातन्त्र के द्वारा चेतन स्तर से अवदमित कर दी जाती है। कुछ आवश्यकताएँ ऐसी होती हैं जिनकी तुष्टि खुले रूप से करना सम्भव नहीं होता है। यह तुष्टि ढके तथा प्रतीकात्मक रूप से की जाती है। यह चिकित्सक का कार्य होता है कि वह इन स्वप्नों की छिपी हुई प्रेरणाओं का अध्ययन अथवा विश्लेषण करके उसे अर्थ प्रदान करें।

दिन-प्रतिदिन के व्यवहारों की व्याख्या – फ्रायड ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक “दी साइकोपैथोलॉजी ऑफ एवरीडे लाईफ” (The Psychopathology of Everyday Life) में स्पष्टतः यह बतलाया है कि दिन-प्रतिदिन के व्यवहार से भी अचेतन के द्वन्द्वतथा रक्षाओं का पता चलता है। उसी के अनुरूप मनोविश्लेषक सेवार्थी के दिन-प्रतिदिन के सभी तरह के व्यवहारों, चाहे वे तुच्छ से तुच्छ ही क्यों न हों, पर ध्यान देने की कोशिश करते हैं तथा उसका भी विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं। बोलने की भूलें, नामों को भूलना, लिखने की भूलें, वस्तुओं को गलत स्थान पर रखना आदि दिन-प्रतिदिन के कुछ ऐसे व्यवहार हैं जिनकी व्याख्या से व्यक्ति के अचेतन द्वन्द्वों का अंदाज होता है।

उपचार की प्रकारता :-

अन्यारोपण या स्थानान्तरण (Transference) तथा व्याख्या या निर्वचन (Interpretation) सेवार्थी का उपचार करने के उपाय हैं। चिकित्सकीय सत्र के दौरान जैसे-जैसे सेवार्थी एवं चिकित्सक के बीच अन्तः क्रिया बढ़ती जाती है, सेवार्थी अक्सर अपने गत जिन्दगी में जैसी मनोवृत्ति शिक्षक, माता-पिता के प्रति बनाकर रखता है, वैसी ही मनोवृत्ति वह चिकित्सक के प्रति विकसित कर लेता है। इसे ही स्थानान्तरण की संज्ञा दी जाती है। यह स्थानान्तरण 3 प्रकार का होता है।

(i) **धनात्मक स्थानान्तरण** – इसमें सेवार्थी चिकित्सक के प्रति प्रेम व स्नेह को दिखलाता है।

(ii) **ऋणात्मक स्थानान्तरण** – इसमें सेवार्थी चिकित्सक के प्रति नकारात्मक संवेगात्मक प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करता है।

(iii) **प्रति स्थानान्तरण** – इसमें चिकित्सक सेवार्थी के प्रति स्नेह, प्रेम एवं संवेगात्मक लगाव दिखाता है। जहाँ तक धनात्मक स्थानान्तरण का प्रश्न है, इसमें चिकित्सा का वातावरण पहले से और अधिक अच्छा बन जाता है जिसमें सेवार्थी, खुलकर अपने अचेतन के अनुभवों को बतलाता है। ऋणात्मक स्थानान्तरण में चिकित्सक को काफी सजग होकर कार्य करना होता है, क्योंकि इसमें सेवार्थी चिकित्सक को अपनी घृणा तथा आक्रामकता का पात्र मानता है। चिकित्सक को सूझ-बूझ का सहारा लेकर सेवार्थी के अविश्वास को विश्वास में बदलना होता है। प्रति स्थानान्तरण में चिकित्सक को अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखना चाहिए तभी चिकित्सा प्रक्रिया ठीक ढंग से सम्पन्न हो सकती है।

अन्यारोपण की प्रक्रिया में प्रतिरोध (resistance) भी होता है। चूँकि अन्यारोपण की प्रक्रिया अचेतन इच्छाओं और द्वंद्वों को अनावृत करती है जिससे कष्ट का स्तर बढ़ जाता है इसलिए सेवार्थी अन्यारोपण का प्रतिरोध करता है। चिकित्सक दुश्चिन्ता, भय, शर्म जैसे संवेगों को उभार कर, जो इस प्रतिरोध के कारण हैं, इस प्रतिरोध को दूर करता है।

निर्वचन के द्वारा परिवर्तन को प्रभावित किया जाता है। निर्वचन की दो तकनीक हैं— प्रतिरोध (Confrontation) एवं स्पष्टीकरण (Clarification) प्रतिरोध में चिकित्सक सेवार्थी के कसी एक मानसिक पक्ष की ओर संकेत करता है, जिसका सामना सेवार्थी को अवश्य करना चाहिए। स्पष्टीकरण एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से चिकित्सक किसी अस्पष्ट या भ्रामक घटना को केन्द्रबिंदु में लाता है। निर्वचन मनोविश्लेषण का शिखर माना जाता है, प्रतिरोध, स्पष्टीकरण तथा निर्वचन को प्रयुक्त करने की पुनरावृत्त प्रक्रिया को समाकलन कार्य (Working through) कहते हैं। यह सेवार्थी को अपने आपको और अपनी समस्या के स्रोत को समझने में तथा बाहर आई सामग्री को अपने अहं में समाकलित करने में सहायता करता है।

समाकलन कार्य का परिणाम है अंतर्दृष्टि (Insight)। चिकित्सा के अन्त में विश्लेषक के सफल प्रयास के फलस्वरूप सेवार्थी को अपने संवेगात्मक कठिनाई एवं मानसिक संघर्षों के अचेतन कारणों का

एहसास होता है, जिससे सेवार्थी में अन्तर्दृष्टि या सूझ का विकास होता है। सेवार्थी में सूझ का विकास हो जाने से उसके स्वयं तथा सामाजिक प्रत्यक्षण में परिवर्तन आ जाता है। वह अपनी व्यक्तिगत प्रेरणाओं को सही संदर्भ में समझने लगता है, और एक स्वस्थ व्यक्ति हो जाता है। इस अवस्था पर मनोविश्लेषण समाप्त कर दिया जाता है।

उपचार की अवधि

सप्ताह में चार-पाँच दिनों तक रोज एक घंटे के सत्र के साथ मनोविश्लेषण कई वर्षों तक चल सकता है। यह एक गहन उपचार है।

व्यवहार चिकित्सा

आइजेक (Eysenck) के अनुसार “व्यवहार उपचार – पद्धति मानव के व्यवहार तथा संवेगों को सीखने के नियमों के आधार पर लाभदायक दिशा में बदल देने का प्रयास है।” ओल्प (Wolpe) ने व्यवहार चिकित्सा को इस प्रकार परिभाषित किया है “अपअनुकूलित व्यवहार को परिवर्तित करने के ख्याल से प्रयोगात्मक रूप से स्थापित या सीखने के नियमों का उपयोग व्यवहार चिकित्सा है। अपअनुकूलित आदतों को कमजोर किया जाता है तथा उनका त्याग किया जाता है, अनुकूलित आदतों की शुरुआत की जाती है तथा मजबूत किया जाता है।” सरासन तथा सरासन (Sarasan and Sarason) के अनुसार “व्यवहार चिकित्सा के अन्तर्गत व्यवहार-परिमार्जन की कई विधियाँ शामिल हैं, जो प्रयोगशालीय परिणामों से प्राप्त शिक्षण तथा अनुकूलन के सिद्धान्तों पर आधारित हैं। व्यवहार चिकित्साओं में आंतरिक संदर्भ के बिना ही बाहरी व्यवहार को परिमार्जित किया जाता है।” इस उपचार-पद्धति की आधारभूत मान्यता है कि (i) असामान्य व्यवहार का कारण व्यक्ति द्वारा अपेक्षित समायोजनपूर्ण प्रतिक्रियाओं को न सीख पाना है। उसके द्वारा अनुपयुक्त प्रतिक्रियाओं का अपनाया जाना या तो दोषपूर्ण सम्बद्ध प्रतिक्रियाओं का सीखना है अथवा व्यक्ति को सीखने की उपयुक्त सुविधाओं का न मिल पाना है। (ii) अनुपयुक्त चिन्तात्मक प्रतिक्रियाएँ जो एक स्थिति विशेष में सीखी गयी हैं, सामान्यीकरण के फलस्वरूप वह उन्हें अन्य परिस्थितियों में भी प्रयुक्त करने लगता है। उपचार कार्य सेवार्थी को सही प्रकार की प्रतिक्रियाओं का अनुभव करने की सुविधा प्रदान करना है। जिससे वह छूटी हुई प्रतिक्रियाओं को सीख सके तथा अनुपयुक्त असमायोजित प्रतिक्रियाओं को छोड़कर सही तथा समायोजित प्रतिक्रियाओं को अपना सके। इस समस्त प्रक्रिया के पीछे अधिगम के सिद्धांतों को अपनाया जाता है।

क्रियाकलाप 5.2

घर में अक्सर हम अनेक तरह के कार्य करते हैं। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिसको करने से हमें इनाम या प्रशंसा मिलती है। सभी छात्रों को पिछले 10 दिनों में जिन बातों पर सकारात्मक प्रबलन मिला उसकी सूची बनानी है।

व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियाँ

व्यवहार चिकित्सा की कई प्रविधियाँ हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख है

1. **क्रमिक विसंवेदनीकरण (Systematic desensitisation):** – यह व्यवहार-चिकित्सा की एक प्रविधि है, जिसको वोल्प (Wolpe) ने विकसित किया यह अन्योन्य प्रावरोध के सिद्धांत पर आधृत है। इस सिद्धांत के अनुसार दो परस्पर विरोधी शक्तियों की एक ही समय में उपस्थिति कमजोर शक्ति को अवरुद्ध करती है। इस विधि में प्रतिअनुबंधन के नियमों को उपयोग में लाकर सेवार्थी में चिंता की जगह पर विश्रान्ति की अवस्था को लाया जाता है। वोल्प के अनुसार क्रमबद्ध असंवेदीकरण की प्रविधि के तीन चरण होते हैं।

- (i) आराम करने का प्रशिक्षण – इस अवस्था में सेवार्थी को विश्राम करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। बाक्स 5.2 में विश्रांति की विधि के बारे में बताया गया है
- (ii) चिंता के पदानुक्रम का निर्माण – इस अवस्था में चिकित्सक उन उद्दीपकों की एक सूची तैयार करता है जिनसे सेवार्थी में चिंता उत्पन्न होती है। यह सूची आरोही क्रम में बनाई जाती है। इसमें सबसे कम चिंता उत्पन्न करने वाले उद्दीपक को सबसे नीचे, और सबसे अधिक चिंता उत्पन्न करने वाली घटना को सबसे ऊपर रखा जाता है।
- (iii) असंवेदीकरण की कार्य-विधि – असंवेदीकरण की प्रक्रिया उपर्युक्त दोनों अवस्थाओं के बाद ही प्रारंभ की जाती है। चिंताओं का पदानुक्रम विकसित होने के बाद सेवार्थी को सबसे कम चिंता वाली परिस्थिति की कल्पना करने को कहा जाता है। सेवार्थी से कहा जाता है कि जरा सा भी तनाव महसूस होने पर उस स्थिति के बारे में सोचना बंद कर दे। कई सत्रों के बाद सेवार्थी विश्राम की अवस्था बनाए रखते हुए तीव्र भय उत्पन्न करने वाली स्थितियों के बारे में सोचने में समर्थ हो जाता है।

बॉक्स 5.2

विश्रांति की विधियाँ

विश्राम का प्रशिक्षण देने में क्रमिक विश्राम प्रशिक्षण जिसे जैकोवसन द्वारा 1938 में प्रतिपादित किया गया था, को अपनाया जाता है। इस विधि में विभिन्न तरह के अभ्यासों (Exercises) जिसमें कुछ सेकंड के लिए मांशपेशियों को कड़ा (Tense) किया जाता है तथा फिर कुछ सेकंड के लिए नरम किया जाता है, के माध्यम से सेवार्थी को मानसिक एवं दैहिक रूप से आराम करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। ध्यान के द्वारा भी विश्रांति की अवस्था उत्पन्न की जा सकती है।

- 2. विमुखता चिकित्सा** – इस चिकित्सा विधि में पीड़ा या दण्ड की सहायता से सेवार्थी में अवांछित या कुसमायोजित व्यवहार के प्रति विमुखता या अरुचि उत्पन्न की जाती है। जैसे मद्यपान के सेवार्थी का उपचार करने हेतु अल्कोहल में मतली उत्पन्न करने वाले औषध को मिला दिया जाता है। जब-जब वह शराब का सेवन करता है। तब-तब वह उल्टी करता है। कई बार ऐसा करने पर शराब को देख कर ही वह मतली का शिकार बन जाता है। इस प्रकार शराब के प्रति उसमें अरुचि या विमुखता उत्पन्न हो जाती है और मद्यपान से उसे मुक्ति मिल जाती है। आवश्यकता के अनुसार विद्युत आघात, सुवाह्य आघात उत्पादक आदि का उपयोग किया जा सकता है। विभेदक प्रबलन द्वारा एक साथ अवांछित व्यवहार को घटाया जा सकता है तथा वांछित व्यवहार को बढ़ावा दिया जा सकता है। वांछित व्यवहार के लिए सकारात्मक प्रबलन तथा अवांछित व्यवहार के लिए निषेधात्मक प्रबलन या अवांछित व्यवहार की उपेक्षा के द्वारा कई तरह की विकृतियों का उपचार किया जा सकता है।
- 3. मुद्रा मितव्ययिता** – इस विधि में व्यवस्था ऐसी की जाती है कि जब सेवार्थी अवांछित व्यवहार को छोड़ कर वांछित व्यवहार करता है तो उसे छोटा कार्ड, करेदनी-चिप्पी (Poker-chip), नकली सिक्का या इसी तरह की कोई वस्तु दी जाती है जिसे टोकन कहते हैं। सेवार्थी इसकी सहायता से अपनी इच्छा के अनुकूल कोई भी चीज ले सकता है। स्पष्टतः यह टोकन धनात्मक प्रबलक (Positive reinforcer) का काम करता है और सेवार्थी इससे वांछित व्यवहार को अर्जित कर लेता है।
- 4. अंतः स्फोटात्मक चिकित्सा तथा फ्लडिंग** – यह दोनों ऐसी प्रविधियाँ हैं जो विलोपन

(extinction) के नियम पर आधारित हैं। इन दोनों तरह की चिकित्सा प्रविधि की मुख्य पूर्वकल्पना यह है कि व्यक्ति किसी उद्दीपक या परिस्थिति के प्रति इसलिए डरता है या चिंतित रहता है क्योंकि वह यह नहीं सीख पाया है कि ऐसे उद्दीपक या परिस्थिति वास्तव में खतरनाक नहीं हैं। जब उन्हें ऐसी परिस्थिति में या उद्दीपकों के बीच कुछ समय तक लगातार रखा जाता है तो वे धीरे-धीरे यह सीख लेते हैं कि उनकी चिंता या डर निराधार हैं और वह धीरे-धीरे विलोपित हो जाता है। अन्तः स्फोटक चिकित्सा में सेवार्थी को सर्वाधिक चिन्ता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति के बारे में कल्पना करने के लिए कहा जाता है जिससे कि सेवार्थी को यह अनुभव हो कि वह परिस्थिति वास्तव में उसके लिए बिल्कुल हानिकर नहीं होती है। प्लडिंग प्रविधि में व्यक्ति या सेवार्थी को चिन्ता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या उद्दीपक के बारे में कल्पना करने को नहीं कहा जाता है बल्कि उस परिस्थिति या उद्दीपक से उसका वास्तविक रूप में आमना – सामना करवाया जाता है। जिससे कि उसमें उस परिस्थिति या उद्दीपक के प्रति सूझ विकसित हो।

5. दृढ़ग्राही चिकित्सा – इसका उपयोग उन व्यक्तियों के लिए किया जाता है जिनमें पर्याप्त सामाजिक कौशल नहीं होता है और वह अन्य व्यक्तियों के साथ अन्तर्व्यक्तिक संबंध स्थापित करने में असमर्थता अनुभव करता है। इस कारण उसमें हीन भावना एवं चिन्ता उत्पन्न हो जाती है। इस प्रविधि का मुख्य उद्देश्य उस व्यक्ति में सामाजिक कौशल को विकसित करना एवं संज्ञानात्मक अवरोधों को दूर करना होता है।

6. प्रतिरूपण – इसमें वांछित व्यवहार को सेवार्थी के सामने प्रदर्शित किया जाता है और सेवार्थी उसका निरीक्षण या प्रेक्षण करता है, जिससे उसे उसी तरह के व्यवहार को करने की प्रेरणा मिलती है। इस प्रकार उसमें अवांछित व्यवहार परिमार्जित हो जाते हैं और वह वांछित व्यवहार करना सीख लेता है। कभी-कभी सेवार्थी को फिल्म या विडियोटेप के माध्यम से अपने व्यवहार में आवश्यक परिवर्तन लाने का सुझाव दिया जाता है ताकि उसका व्यक्तित्व अभियोजन उन्नत बन सके।

व्यवहार चिकित्सा में तकनीकों की बड़ी विविधता है। परिशुद्ध व्यवहार विश्लेषण करना और उचित तकनीकों से उपचार का पैकेज बनाना ही चिकित्सक का कौशल माना जाता है।

संज्ञानात्मक चिकित्सा

निटीजिल, वर्नस्टीन तथा मिलिक (Neitzel Bernstein & Milich) के शब्दों में “संज्ञानात्मक चिकित्सा को ऐसे उपचार उपागम के रूप में परिभाषित किया जाता है जो सेवार्थी के संज्ञान (विश्वास, स्कीमा, आत्म-कथन तथा समस्या-समाधान उपायों) को प्रभावित करके उसके कुसमायोजी व्यवहार को परिवर्तित करने की कोशिश करता है।” इस परिभाषा से निम्नांकित तथ्य प्राप्त होते हैं – (i) संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा में रोगात्मक व्यवहार का कारण गलत संज्ञान या चिंतन माना जाता है। (ii) इस चिकित्सा में सेवार्थी के इस गलत संज्ञान या चिंतन को दूर करके उसके जगह पर सही संज्ञान या चिंतन विकसित करने की कोशिश की जाती है। इस प्रक्रिया को संज्ञानात्मक पुनर्संरचना कहा जाता है।

संवेग तर्क चिकित्सा – एलबर्ट एलिस् (Albert Ellis) ने संज्ञानात्मक आधारशिला पर तर्कशील-भावोत्तेजक पद्धति को प्रतिपादित किया। इस पद्धति के अनुसार संवेगात्मक प्रतिक्रियायें उन अतार्किक वाक्यों का परिणाम हैं जिन्हें व्यक्ति मन ही मन दोहराते रहता है तथा जो अतार्किक विश्वासों को जन्म देता है। यह विश्वास अर्थपूर्ण जीवन निर्वाह में बाधा डालते हैं और अवांछित व्यवहार उत्पन्न करते हैं। इन अतार्किक पराजयपूर्ण विश्वासों को उनके तर्कपूर्ण परीक्षण द्वारा समाप्त करना ही उपचार का लक्ष्य है। उदाहरणार्थ, चिन्ता युक्त व्यक्ति स्वयं तथा अन्य लोगों से अयर्थाथवादी अपेक्षाएँ कभी न पूरी हो सकने योग्य (जैसे-मुझे सबका प्यार प्राप्त करना है) रख कर अपने लिए समस्यायें उत्पन्न कर सकता है। एलिस् के अनुसार व्यक्ति अनेक अतार्किक विश्वासों को स्वयं में पाल सकता है। जैसे यह विश्वास कि

व्यक्ति को प्रत्येक कार्य में पूर्ण दक्ष होना चाहिए। अनेक व्यक्ति इस भ्रामक मान्यता पर विश्वास कर अपने प्रत्येक कार्य का मूल्यांकन करते हैं, फलतः उन्हें निराशा मिलती है क्योंकि कोई भी व्यक्ति हर काम में पूर्णतः दक्ष नहीं हो सकता। अपने अतार्किक विश्वास पर खरा न उतर सकने के कारण वह दुःखी, निराश, भयावह, तनावग्रस्त हो सकता है। स्पष्ट है कि इसके दो लक्ष्य हैं: (1) लोगों को उनकी आधारभूत दोषपूर्ण अतार्किक विश्वासों के प्रति प्रश्न उठाना और उनके अयर्थाथवादी तथा दोषपूर्ण स्वरूप को जान लेना। (2) फिर उनके स्थान पर अधिक रचनात्मक तथा यर्थाथवादी विचारों विश्वासों, अभिवृत्तियों व मान्यताओं की स्थापना करना। धीरे-धीरे सेवार्थी अपने जीवन-दर्शन में परिवर्तन लाकर अविवेकी विश्वासों को परिवर्तित करने में समर्थ हो जाता है और इससे उसके मनोवैज्ञानिक कष्टों में कमी आती है।

अरॉनबेक की संज्ञानात्मक चिकित्सा — इस चिकित्सा विधि का प्रतिपादन बेक द्वारा विषादी रोगियों के उपचार के लिए किया गया था। लेकिन बाद में इसका उपयोग अन्य विकृतियों के उपचारों में भी किया जाने लगा। अरॉन बेक की संज्ञानात्मक पद्धति के अनुसार “अनेक विकृतियाँ विशेषकर विषाद व्यक्ति की स्वयं के प्रति, संसार के प्रति तथा भविष्य के नकारात्मक विश्वासों के कारण उत्पन्न होते हैं।” बेक ने इन तीन तरह के अतार्किक एवं गलत स्कीमा को संज्ञानात्मक त्रिक (Cognitive Triad) कहा है। बेक ने विषादी रोगियों में विकृति चिंतन के कई प्रकारों का वर्णन किया है जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं।

(1) मनचाहा अनुमान (Arbitrary Inference)- इसमें सेवार्थी अपर्याप्त या अतर्कसंगत सूचनाओं के आधार पर अपने बारे में अनुमान लगाता है जैसे—यदि कोई व्यक्ति यह विचार रखता है कि वह बेकार है क्योंकि उसे अमुक पार्टी में नहीं बुलाया गया।

(2) आवर्धन (Magnification)- इसमें सेवार्थी किसी छोटी घटना को बढ़ा-चढ़ा कर काफी विस्तारित कर देता है जैसे यदि कोई व्यक्ति यह सोचता है कि उसके द्वारा बनाया गया सम्पूर्ण मकान बेकार हो गया क्योंकि उसमें पूजाघर के लिए कोई जगह नहीं रखी,

(3) न्यूनीकरण (Minimization)- इसमें सेवार्थी बड़ी घटना को संकुचित कर उसके बारे में विकृत ढंग से सोचता है। अतः यह आवर्धन के विपरीत है। जैसे यदि कोई छात्र यह सोचता है कि इतनी कठिन परीक्षा में वह मात्र भाग्य के साथ देने से सफल हो पाया है क्योंकि सच्ची बात तो यह है कि वह एक मूर्ख एवं बुद्धिहीन ही है, संज्ञानात्मक पद्धति का कार्य इन नकारात्मक मनसूबों को सकारात्मक रूप में बदल देना है। इस चिकित्सा में सेवार्थी के पांच संबंधित उपायों पर बल डाला जाता है। (i) संज्ञान (Cognition) संवेग (emotion) तथा व्यवहार (Behaviour) के बीच संबंधों की पहचान करना। (ii) नकारात्मक संज्ञानात्मक त्रिक के परिणामों को मॉनीटर करना। (iii) इन गलत विश्वासों एवं विकृतियों के पक्ष तथा विपक्ष में सबूतों की परख करना। (iv) गलत एवं अनुचित संज्ञानों के विकल्प के रूप में अधिक वास्तविक व्याख्या प्रस्तुत करना। (v) कुछ गृह-कार्यों को करना जिसमें सेवार्थी नये चिंतन उपायों का रिहर्सल करता है तथा समस्याओं का हल निकालता है।

व्यवहार चिकित्सा के समान ही संज्ञानात्मक चिकित्सा भी सेवार्थी की किसी एक विशिष्ट समस्या के समाधान पर ध्यान केन्द्रित होती है। यह चिकित्सा अल्पकालिक होती है जो 10—20 सत्रों तक समाप्त हो जाती है।

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा — यह वास्तव में व्यवहार-चिकित्सा के सिद्धान्तों पर आधारित है लेकिन जहाँ व्यवहार-चिकित्सा में संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं जैसे प्रतिमा, चिन्तन, कल्पना, आदि की उपेक्षा की गई है वहाँ संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा में इन सभी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं पर विशेष रूप से बल दिया गया है। रैथस तथा नेविड (Rathus and Nevid) ने कहा है कि “संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा वास्तव में चिकित्सा का एक प्रकार है जो उपचार के संज्ञानात्मक व्यवहारात्मक उपागमों के संकलन पर आधारित है।” संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा सबसे अधिक प्रचलित और प्रभावशाली विधि है जो विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक विकारों को सुधारने में मदद करती है। मनोविकृति की रूपरेखा बताने के लिए

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा CBT जैव-मनोसामाजिक उपागम का उपयोग करती है। समस्या के जैविक पक्षों को विश्रान्ति की विधियों द्वारा, मनोवैज्ञानिक पक्षों को व्यवहार चिकित्सा तथा संज्ञानात्मक चिकित्सा तकनीकों द्वारा और सामाजिक पक्षों को पर्यावरण में परिवर्तन द्वारा सम्बोधित करती है। यह एक व्यापक चिकित्सा है जिसकी प्रभावोत्पादकता प्रमाणित हो चुकी है।

मानवतावादी-अस्तित्वपरक चिकित्सा

मानवतावादी-अस्तित्वपरक चिकित्सा में सेवार्थी के व्यक्तिगत अनुभवों तथा स्वतंत्र विचारों पर बल दिया जाता है तथा उसे नियंत्रित स्वतन्त्रता देकर रोग निदान तथा नयी जीवन शैली की तलाश का मौका दिया जाता है। अस्तित्ववादी मनुष्य के अस्तित्व के सार से सम्बन्धित हैं। ये लोग जीवन के अर्थ, उद्देश्य एवं लक्ष्य के अध्ययन में रुचि लेते हैं। डेवीसन तथा नील (Davison and Neal) ने इसकी चर्चा करते हुए कहा है कि, “मानवतावादी तथा अस्तित्वात्मक चिकित्सकों का तात्पर्य सूझ-चिकित्साओं से है जहाँ व्यक्ति की आत्मनिष्ठ अनुभूतियों, स्वतंत्र इच्छा-शक्ति तथा एक नई जीवन-शैली को निश्चित करने की निरन्तर उपस्थित योग्यता पर बल दिया जाता है” इस चिकित्सा विधि के अनुसार व्यक्ति के मानसिक रोगों का कारण उसका अकेलापन, अन्य लोगों से खराब संबंध तथा अपने जीवन के अर्थ को समझने में अयोग्यता आदि है। इस विचारधारा के अनुसार मनुष्य व्यक्तिगत संवृद्धि एवं आत्मसिद्धि की इच्छा तथा संवेगात्मक रूप से विकसित होने की सहज आवश्यकता से अभिप्रेरित होते हैं। जब समाज और परिवार के द्वारा उसकी आत्मवृद्धि या आत्मसिद्धि की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती है तब उसमें मनोवैज्ञानिक कष्ट उत्पन्न होने लगते हैं, इसलिए चिकित्सा के दौरान एक अनुज्ञात्मक, अनिर्णयात्मक तथा स्वीकृतिपूर्ण वातावरण तैयार किया जाता है जिसमें सेवार्थी के संवेगों की मुक्त अभिव्यक्ति हो सके तथा संतुलन और समाकलन प्राप्त किया जा सके। इस विधि में चिकित्सक केवल एक सुगमकर्ता और मार्गदर्शक होता है। जब सेवार्थी अपने जीवन में आत्मसिद्धि की बाधाओं को दूर करने के योग्य हो जाता है तब उसका, उपचार पूर्ण माना जाता है। सेवार्थी आत्म-संवृद्धि की प्रक्रिया को प्रारम्भ करता है जिससे वह स्वस्थ हो जाता है।

लोगो चिकित्सा — यह मनोचिकित्सा का वह प्रकार है, जिसका प्रतिपादन विक्टर फ्रेंकल ने किया। चैपलिन ने कहा है कि “लोगो- चिकित्सा मनोचिकित्सा का एक प्रकार है जो सेवार्थी के अस्तित्व के अर्थ के विश्लेषण पर आधारित होता है।” “लोगो-चिकित्सा दो शब्दों से मिल कर बनी है— लोगो तथा चिकित्सा। लोगो अथवा लोगस से तात्पर्य ‘अर्थ’ है। और चिकित्सा से तात्पर्य उपचार है। अतः लोगों चिकित्सा का तात्पर्य वह चिकित्सा है, जिसमें सेवार्थी की जिंदगी में अर्थहीनता के भाव से उत्पन्न होनेवाली समस्याओं एवं चिन्ताओं को दूर करने की कोशिश की जाती है। इस तरह की चिकित्सा में सेवार्थी के गत जिन्दगी की ऐतिहासिक पुनर्संरचना पर बल न डालकर उसके समकालीन आध्यात्मिक समस्याओं और उसके भविष्य या आगे के आशय को समझने पर बल डाला जाता है। फ्रेंकल जीवन के प्रति खतरनाक परिस्थितियों में भी अर्थ प्राप्त करने की इस प्रक्रिया को अर्थ निर्माण की प्रक्रिया कहते हैं। फ्रेंकल के अनुसार व्यक्ति का सबसे प्रमुख अभिप्रेरक अर्थ की इच्छा होता है। इसका तात्पर्य है अपनी जिन्दगी के आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक पहलुओं के अर्थ एवं संगतता को वास्तविक ढंग से समझकर उसके अनुरूप व्यवहार करना। जब व्यक्ति की इस अभिप्रेरक की संतुष्टि नहीं होती है तो इससे अस्तित्वात्मक कुंठा उत्पन्न होती है और इससे व्यक्ति की जिन्दगी में अर्थहीनता के भाव की उत्पत्ति हो जाती है जिसे फ्रेंकल ने अस्तित्वात्मक रिक्तता कहा है। अपने अस्तित्व का अर्थ प्राप्त करने की प्रक्रिया में सेवार्थी की मदद करना चिकित्सक का लक्ष्य होता है। लोगो चिकित्सा के लिए फ्रेंकल ने दो प्रविधियों का उल्लेख किया है—

1. **परस्पर विरोधी अभिप्राय-प्रविधि**— इसमें सेवार्थी को वही व्यवहार करने के लिए कहा जाता है जो उसकी चिन्ता या भय का कारण होती है।
2. **अचिन्तन प्रविधि**— इस प्रविधि में सेवार्थी को चिन्ता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या व्यवहार से ध्यान

हटाकर अन्य रचनात्मक तथ्यों की ओर लाने की कोशिश की जाती है। इससे सेवार्थी में नयी चेतना, आध्यात्मिकता एवं सूझ-बूझ विकसित हो जाती है। जब वह अपने अस्तित्व के अर्थ को समझ लेता है तो उसे जीवन में सार्थकता नजर आने लगती है।

सेवार्थी—केन्द्रित चिकित्सा

इसे कार्ल रोजर्स ने विकसित किया। उपचार को सफल बनाने तथा सुधार की दिशा में प्रगति करने का उत्तरदायित्व सेवार्थी पर होने के कारण ही इसे सेवार्थी—केन्द्रित अथवा अनिर्देशन पद्धति का नाम दिया जाता है। रोजर्स तथा ग्रेगरी का मत है कि “प्रत्येक व्यक्ति की सार्थकता पर विश्वास सेवार्थी—केन्द्रित पद्धति में निहित आधारभूत सिद्धान्त है” सेवार्थी में स्वयं को स्वस्थ बनाने की सामर्थ्य होती है तथा उसमें अपनी समस्याओं को स्वयं सुलझाने तथा बिना किसी निर्देशन के सही मार्ग के चयन कर सकने की क्षमता विद्यमान है। इस पद्धति में सेवार्थी को सलाह देने, निर्देशित करने, आलोचना करने अथवा अनुनय करने का अधिकार मनोचिकित्सक को नहीं दिया जाता। मनोचिकित्सक का मुख्य कार्य ऐसा वातावरण प्रस्तुत करना है जिससे सेवार्थी स्वतः अपने संवेगात्मक प्रतिरोधों को दूर कर सामान्य विकास की दिशा में बढ़ सके। इस चिकित्सा में एक ऐसे अन्तर्व्यक्तिक सम्बन्ध को उत्पन्न किया जाता है जिसका उपयोग व्यक्तिगत वर्द्धन के लिए क्लायंट आगे करता है। रोजर्स के अनुसार इस तरह का वर्द्धन उत्पन्न करने वाला संबंध की उत्पत्ति के लिए चिकित्सक में अन्य बातों के अलावा निम्नांकित तीन गुणों का होना अनिवार्य है।

(1) शर्तहीन धनात्मक सम्मान — चिकित्सक क्लायंट पर एक व्यक्ति के रूप में विशेष ध्यान देते हैं। शर्तहीन से अर्थ है कि चिकित्सक क्लायंट को स्वीकार करता है। चिकित्सक क्लायंट के भावों को न तो अनुमोदित करता है और न ही उसे नामंजूर करता है बल्कि उसे मात्र स्वीकार करता है। ‘धनात्मक’ शब्द इस ओर इशारा करता है कि चिकित्सक क्लायंट के समस्या समाधान एवं वर्द्धन की अन्तः शक्ति में विश्वास रखता है।

(2) तदनुभूति — रोजर्स के अनुसार तदनुभूति से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सक क्लायंट के भावों को ठीक से समझे और वह पर्यावरण को अपनी नजर से न देखकर क्लायंट की नजर से देखें।

(3) संगतता — चिकित्सक को क्लायंट के साथ एक यथार्थ एवं वास्तविक संबंध विकसित करना चाहिए इसके लिए यह आवश्यक है कि चिकित्सक के भाव तथा क्रियाएँ एक-दूसरे के साथ संगत हो। सार यह है कि यह चिकित्सा सेवार्थी को अपना वास्तविक स्व होने में मदद करती है जिसमें चिकित्सक एक सुगमकर्ता की भूमिका निभाता है।

गेस्टाल्ट चिकित्सा

इसका प्रतिपादन फ्रेडरिक एस. पर्स के द्वारा किया गया है। ‘गेस्टाल्ट’ एक जर्मन शब्द है जिसका तात्पर्य समग्र अथवा सम्पूर्ण से होता है। गेस्टाल्ट चिकित्सा मन तथा शरीर की एकता पर बल डालता है जिसमें चिन्तन, भाव तथा क्रिया के समन्वय की आवश्यकता पर सर्वाधिक बल डाला जाता है गेस्टाल्ट चिकित्सा का उद्देश्य सेवार्थी में आत्म जागरूकता एवं आत्म-स्वीकृति के स्तर को ऊँचा करना होता है। एक अन्य अर्थ में इस चिकित्सा का मुख्य लक्ष्य सेवार्थी को अपनी आवश्यकता, इच्छा एवं आशंकाओं को समझने एवं स्वीकार करने में मदद करना होता है। सेवार्थी को उन शारीरिक प्रक्रियाओं एवं संवेगों से भी अवगत करना होता है जिनके कारण उसकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती है। इस चिकित्सा विधि को हम कई लोगों पर एक साथ भी करवा सकते हैं।

वैकल्पिक चिकित्सा

इन्हें वैकल्पिक चिकित्सा इसलिए कहा जाता है क्योंकि इनमें पारंपरिक औषध-उपचार या

मनाचिकित्सा की वैकल्पिक उपचार संभावनाएँ होती हैं। वैकल्पिक चिकित्सा में योग, ध्यान, ऐक्यपंचर, वनौषधि आदि प्रमुख हैं जिसमें से योग एवं ध्यान ने सबसे अधिक लोकप्रियता प्राप्त की है। योग एक प्राचीन भारतीय पद्धति है जो प्राकृतिक नियमों पर आधारित है। इसका प्रतिपादन पतंजलि ने किया। योग चिकित्सा के द्वारा मन को प्रशिक्षित किया जाता है। योग के द्वारा किसी व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों और प्रेरणाओं को एक स्थान पर संगठित किया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति ब्रह्म को प्राप्त करता है जिससे कि वह परम-आरोग्यता तक पहुँचता है। योग चिकित्सा पूर्णतः वैज्ञानिक व सैद्धान्तिक आधारों पर आधारित है तथा व्यक्तित्व निर्माण में सहायक होता है। इसके द्वारा किसी व्यक्ति की मानसिक व शारीरिक क्रियाओं का शुद्धिकरण होता है तथा केन्द्रितता बढ़ती है जिसके कारण वह अपनी समस्या को पहचान कर स्वयं निर्देशित करने में सक्षम हो जाता है। योग में आसन, ध्यान, श्वसन या प्राणायाम जैसी विधियों का उपयोग किया जाता है, ध्यान में व्यक्ति जानबूझकर थोड़े समय के लिए जिन्दगी के प्रवाह से अपने आपको दूर रखता है ताकि वह शांति तथा एकाग्रता को प्राप्त कर सके। विपश्यना ध्यान, जिसे सतर्कता-आधारित ध्यान के नाम से भी जाना जाता है, में ध्यान को बांधे रखने के लिए कोई नियत वस्तु या विचार नहीं होता है व्यक्ति निष्क्रिय रूप से विभिन्न शारीरिक संवेदनाओं एवं विचारों जो उसकी चेतना में आते रहते हैं, का प्रेक्षण करता है। सुदर्शन क्रिया योग एक अन्य लाभदायक, कम खतरे वाली और कम खर्च वाली तकनीक है, जिसमें तीव्र गति से श्वास लिया जाता है, जो अत्यधिक वायु संचार करती है। यह दबाव, दुश्चिन्ता, अवसाद, मादक द्रव्यों का दुरुपयोग तथा अपराधियों के पुनः स्थापन के लिए उपयोग की जाती है। योग विधि कुशल-क्षेम, भावदशा, मानसिक केंद्रीयता तथा दबाव सहिष्णुता को बढ़ाती है, अनिद्रा का उपयोग भी योग से किया जा सकता है। कुंडलिनी योग भी मानसिक विकारों के उपचार में प्रभावी पाया गया है। कुंडलिनी योग में मंत्रों के उच्चारण के साथ श्वसन तकनीक या प्राणायाम को संयुक्त किया जाता है। अवसाद की पुनरावृत्त घटना की रोकथाम सतर्कता आधारित ध्यान या विपश्यना के द्वारा की जा सकती है।

क्रियाकलाप 5.3

कक्षा में कुछ विद्यार्थी ऐसे होते हैं जिनमें एकाग्रता की कमी होती है। मनन तथा योग जैसी विधियों का उपयोग कर अपनी मानसिक शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। कक्षा में कुछ दिन सुबह-सुबह 5 से 10 मिनट का योग या मनन करने का निर्देश छात्रों को दें।

परामर्श

परामर्श एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें अनेक उपागमों एवं प्रविधियों को प्रयुक्त करके व्यक्तित्व का विकास, समस्याओं का समाधान कर जीवन को सहज, उद्देश्यपूर्ण एवं सन्तोषप्रदायी बनाने का प्रयत्न किया जाता है। शॉशटॉर्म तथा ब्रेमर के अनुसार, “परामर्श दो व्यक्तियों के बीच उद्देश्यपूर्ण एवं समान आधार पर एक सम्बन्ध है, जिसमें एक व्यक्ति जो प्रशिक्षित होता है, दूसरे की स्वयं को तथा वातावरण को बदलने में सहायता करता है।” रॉबिन्सन के अनुसार “परामर्श का लक्ष्य व्यक्ति की समायोजनात्मक अनुभूति न केवल तात्कालिक अपितु दीर्घकालिक परिस्थितियों में भी, उसकी समाज में सार्थकता की वृद्धि करना है।” परामर्श के स्वरूप के बारे में निम्नांकित विशेष बिन्दु हैं—

परामर्श का स्वरूप

- (1) परामर्श एक प्रक्रिया है।
- (2) परामर्श परामर्शी और परामर्शदाता के मध्य अन्तक्रियात्मक सम्बन्ध हैं।
- (3) परामर्श एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें अनेक अनुक्रमिक गतिविधियाँ सम्पन्न होती हैं।
- (4) परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता प्रशिक्षण, अनुभव और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर सहायता

देता है।

- (5) परामर्श प्रक्रिया परामर्शी के लिए अधिगम की परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है जिनके द्वारा व्यक्ति के संज्ञान, अनुभूति, अनुक्रिया, अन्तर्व्यक्तिक, सम्बन्धों में परिवर्तन उत्पन्न करने में व्यक्ति को लोकतांत्रिक सहायता प्राप्त होती है।
- (6) परामर्श का कार्य घर, विद्यालय, उद्योग, चिकित्सालय, सामाजिक और सामुदायिक केन्द्र जैसी विविध परिस्थितियों में सम्पन्न किया जाता है।
- (7) परामर्श का स्वरूप विकासात्मक, निरोधात्मक तथा उपचारात्मक होता है।
- (8) परामर्श मूलतः व्यक्ति के हित की दिशा में उन्मुख होता है।
- (9) परामर्श में सम्बन्ध संरचना की विशेषताएँ स्नेह, स्वतः स्फूर्त रुचि और बोध होती है।
- (10) परामर्श प्रक्रिया में सत्यनिष्ठा, निष्पक्षता और सम्मान को महत्व दिया जाता है।
- (11) परामर्श प्रक्रिया की अनेक अवस्थाएँ— तैयारी, आरम्भिक, मध्यवर्ती, समापन और अनुवर्ती होती है।
- (12) एक व्यवसाय के रूप में परामर्श के क्षेत्र में आचार—संहिता का पालन किया जाता है। यह आचार संहिता सदैव सामाजिक आचार—संहिता के अनुरूप हो यह आवश्यक नहीं है।
- (13) परामर्शदाता परामर्शी के व्यवहार के बारे में निर्णय नहीं करता है।
- (14) परामर्श परामर्शी के आत्मविश्वास, आत्म — बोध, आत्म—निर्देशन, आत्म—सिद्धि, आत्म — निर्णयन और आत्म—उन्नयन का विकास करने में सहायक होता है, परामर्श द्वारा व्यक्ति के जीवन में सार्थकता वृद्धि होती है।
- (15) परामर्श का उद्देश्य भविष्य की समस्याओं का निरोध करने तथा भविष्य की समस्याओं के समाधान हेतु व्यक्ति को समर्थ बनाना होता है किन्तु वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए भी सहायक होता है।
- (16) व्यक्ति की परामर्श सम्बन्धी आवश्यकताओं में विविधता होती है, परामर्शी की आवश्यकताओं के अनुसार परामर्शदाता चिकित्सक, मनोचिकित्सा विधि विशेषज्ञ, अध्यापक, सामाजिक कार्यकर्ता, राजनेता या अन्य अनुभवी व्यक्ति हो सकते हैं किन्तु जहाँ उद्देश्य क्षेत्र संज्ञान, अनुभूति, व्यवहार से सम्बन्धित हो वहाँ मनोवैज्ञानिक ज्ञान और प्रशिक्षण प्राप्त परामर्शदाता सहायक होता है।

परामर्श का क्षेत्र विस्तार

परामर्श कार्य का सम्बन्ध व्यक्ति के जीवन की सभी अवस्थाओं और प्रायः सभी क्षेत्रों से हैं। हमें परामर्शदाता के व्यावसायिक सहयोग की आवश्यकता घर, विद्यालय, कार्य—स्थल, उपचार केन्द्र व चिकित्सालय, आवासीय संरक्षण केन्द्र, सामुदायिक केन्द्र, शैक्षिक उपचार केन्द्र, स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा स्थापित बहुउद्देश्यी सहायता केन्द्र जैसे विभिन्न स्थलों पर होती है। इन समस्त केन्द्रों पर सुप्रशिक्षित या अल्प— प्रशिक्षित परामर्शदाताओं की पूर्णकालिक या अल्पकालिक सेवाएँ ली जाती हैं अर्थात् यह कि परामर्शदाता के रूप में प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिकों के लिए रोजगार के अवसर ऐसे सभी स्थलों पर उपलब्ध हो सकते हैं। व्यक्ति की आयु अवस्था की दृष्टि से परामर्श की आवश्यकता हमारे जीवन में सभी आयु अवस्थाओं में होती है।

परामर्श के लक्ष्य

- | | | |
|---|--|--------------------------------------|
| (1) अवलम्ब | (2) मनो—शैक्षिक निर्देशन | (3) निर्णय —रचना |
| (4) समस्या समाधान | (5) समायोजन | (6) आपत्कालीन हस्तक्षेप एवं प्रबन्धन |
| (7) लक्षण उन्मूलन / सुधार | (8) अन्तर्दृष्टि का विकास | (9) आत्म—बोध का विकास |
| (10) परिवेश एवं स्वयं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास | | |
| (11) जीवन में सार्थकता एवं अर्थबोध का विकास | | |
| (12) अपरिहार्य को स्वीकारने हेतु तत्परता का विकास | (13) व्यवहार परिमार्जन एवं व्यक्तित्व परिवर्तन | |
| (14) व्यवस्था, संगठन या समाज में परिवर्तन | (15) उपयुक्त स्वास्थ्य व्यवहार का विकास | |

परामर्श के उद्देश्य

- (1) मानसिक स्वास्थ्य
- (2) व्यक्ति के संसाधन का संवर्धन
- (3) प्रकार्यात्मक दृष्टि से संपूर्ण व्यक्ति का विकास सहज बनाना
- (4) स्व आत्मीकरण
- (5) आत्म सिद्धि

परामर्श और मनोचिकित्सा

- (1) परामर्श का मुख्य कार्य व्यक्ति की महत्वपूर्ण समस्याओं के समाधान के प्रति सुनिश्चित वैकल्पिक निर्णयों को भली-भाँति समझा- बुझाकर उसका आवश्यक मार्ग-दर्शन करना होता है। दूसरी तरफ मनोचिकित्सक ऐसी समस्याओं का निदान करता है एवं मनोचिकित्सा की विधियों द्वारा उसका उपचार करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि परामर्श मनोवैज्ञानिक का दृष्टिकोण अधिकतर निरोधात्मक (Preventive) होता है जबकि मनोचिकित्सक का दृष्टिकोण निरोधात्मक कम तथा उपचारी (Remedial) अधिक होता है।
- (2) परामर्श मनोविज्ञान में उन मानवीय समस्याओं के समाधान पर अधिक बल डाला जाता है, जिनका स्वरूप साधारण एवं कम गंभीर होता है। जैसे पढ़ते समय ध्यान इधर से उधर भटकना, नींद नहीं आना, नख को दाँत से काटते रहना आदि जैसे कुछ साधारण समस्याओं का समाधान परामर्श मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र माना गया है। परन्तु गंभीर मानवीय समस्याओं एवं मानसिक रोगों का निदान एवं उपचार मनोचिकित्सक का कार्यक्षेत्र माना गया है।
- (3) परामर्श मनोवैज्ञानिक सिर्फ सामान्य व्यक्तियों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक विकल्पों के लिए मार्गदर्शन करते हैं जबकि मनोचिकित्सक सामान्य एवं असामान्य दोनों ही तरह के व्यक्तियों की समस्याओं का निदान एवं उपचार करते हैं।

सारांश

- ❖ मनोवैज्ञानिक विकारों का वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक विधियों से उपचार मनोचिकित्सा कहलाती है।
- ❖ रोगी या सेवार्थी एवं चिकित्सक जिसे मनोचिकित्सक कहा जाता है, दोनों के बीच का संबंध बहुत महत्वपूर्ण होता है।
- ❖ मनोगत्यात्मक चिकित्सा, व्यवहार चिकित्सा, संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, मानवतावादी अस्तित्वपरक चिकित्सा आदि कुछ महत्वपूर्ण मनोचिकित्सा प्रविधियाँ हैं।
- ❖ वैकल्पिक चिकित्सा एक अन्य महत्वपूर्ण चिकित्सा प्रविधि है जिसमें योग एवं ध्यान का महत्वपूर्ण योगदान है।
- ❖ परामर्श के द्वारा शिक्षा, व्यवसाय, परिवार, एवं व्यक्तिगत समस्याओं और कठिनाइयों को दूर किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकल्पीय

1. मनश्चिकित्सा का उद्देश्य निम्न में से है—
 - (अ) आन्तरिक संघर्षों एवं तनाव को कम करना
 - (ब) कुसमायोजित व्यवहार में परिवर्तन
 - (स) अंतः शक्ति में वृद्धि
 - (द) सभी
2. चिकित्सात्मक संबंध है
 - (अ) सेवार्थी-परिवार के बीच का
 - (ब) चिकित्सक-परिवार के बीच का

- (स) सेवार्थी—समाज के बीच का
(द) सेवार्थी—मनश्चिकित्सक के बीच का
3. मनोगत्यात्मक चिकित्सा के प्रतिपादक हैं—
(अ) कार्ल रोजर्स (ब) वाटसन
(स) फ्रायड (द) ओल्फ
4. मनश्चिकित्सा की सबसे प्राचीन विधि है—
(अ) व्यवहार चिकित्सा
(ब) मनोगत्यात्मक चिकित्सा
(स) संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा
(द) मानवतावादी—अस्तित्वपरक चिकित्सा
5. व्यवहार चिकित्सा के मुख्य समर्थक हैं।
(अ) फ्रायड (ब) ओल्फ
(स) युंग (द) रोजर्स
6. अलबर्ट एलिस ने किस चिकित्सा विधि का प्रतिपादन किया था?
(अ) व्यवहार चिकित्सा
(ब) रैसनल—इमोटिव चिकित्सा
(स) मॉडेलिंग
(द) विरुचि चिकित्सा
7. एफ पर्स का संबंध किस चिकित्सा विधि से है?
(अ) गेस्टाल्ट चिकित्सा
(ब) व्यवहार चिकित्सा
(स) क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा
(द) लोगो चिकित्सा
8. स्वप्नों के अध्ययन के आधार पर मानसिक विकृति की पहचान किस विधि में होती है?
(अ) व्यवहार चिकित्सा
(ब) मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा
(स) व्यक्ति केन्द्रित चिकित्सा
(द) संज्ञानात्मक चिकित्सा
9. गेस्टाल्ट का अर्थ है
(अ) आधा (ब) अर्थ
(स) कम (द) समग्र
10. वैकल्पिक चिकित्सा का प्रकार नहीं है
(अ) शेपिंग (ब) एक्चूपंचर
(स) योग (द) ध्यान

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. मनोचिकित्सा का अर्थ समझाइये।
2. मनोचिकित्सा के लक्ष्य बताइये।
3. स्थानांतरण के प्रकार बताइये।
4. चिकित्सात्मक संबंध को परिभाषित कीजिये।
5. व्यवहार चिकित्सा क्या है?
6. क्रमबद्ध असंवेदीकरण को समझाइये।

7. व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियों के नाम बताइये।
8. लोगो चिकित्सा को समझाइये।
9. गेस्टाल्ट चिकित्सा के बारे में बताइये।
10. अस्तित्ववादी चिकित्सा का अर्थ स्पष्ट करें।
11. परामर्श को परिभाषित कीजिये।
12. परामर्श के उद्देश्य बताइये।

निबंधात्मक प्रश्न

1. मनोचिकित्सा की प्रकृति एवं प्रक्रिया को बताते हुए, चिकित्सात्मक संबंध को स्पष्ट कीजिए।
2. मनोगत्यात्मक चिकित्सा का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. व्यवहार चिकित्सा पर लेख लिखिए।
4. क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा की आलोचनात्मक व्याख्या करें।
5. मानवतावादी—अस्तित्वपरक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर

1. (द) 2. (द) 3. (स) 4. (ब) 5. (ब) 6. (ब) 7. (अ) 8. (ब) 9. (द) 10. (अ)
-